पूरनी

नीरज नीर

आशीर्वाद, बुद्ध विहार पो ऑ
अशोक नगर राँची 834002

जहाँ पहले बस्तियाँ थी, वहां तक शहर ने पाँव पसार लिये हैं और जहाँ जंगल थे वहाँ बस्तियाँ आबाद हो गईं। ठन्डे जल के सोते बदबूदार नालों में तब्दील हो गए हैं। नदियों के पाट को घेर कर उन्हें फाँसी पर लटका दिया गया है। हवाएं दिशाशूल का शिकार हो रही हैं। सरलता और निष्कपटता की नदी सूख रही है। जमीन गर्म तवे की तरह तप रही है एवं बाजारवाद उस पर अपनी रोटी सेंक रहा है। आसमान में टंगे, अपार्टमेंट्स में रहने वाले लोग मग्न हैं टीवी पर धार्मिक ठेकेदारों की बहस देखने में। भूख प्यास से व्यथित एवं क्लांत जंगली जानवर जिधर नजर डालते हैं उधर ही दीखते हैं जाल लिए आदमी। कभी भय से तो कभी क्रोध से वे घुस जा रहे हैं इंसानों द्वारा आबाद बस्तियों में जो बसाई गयी हैं, जंगलों को कब्जा कर। जल, जंगल एवं जमीन से जुड़े लोग छटपटा रहे हैं प्यासी चिड़िया की तरह।

कुछ वर्षों पूर्व तक रांची शहर से बाहर निकलते ही जंगल शुरू हो जाते थे। पर अब धीरे-धीरे जंगल पीछे हट रहे हैं। मानो जंगल और शहर में एक अघोषित युद्ध चल रहा है और युद्ध में हारे हुए सैनिक की तरह जंगल पीछे हटता चला जा रहा है। इस युद्ध में कभी भी सीजफायर नहीं होता, कोई शांति का समझौता नहीं होता। यह एकतरफा युद्ध है जो आरोपित है तथाकथित सभ्यता के द्वारा जंगलों के विरुद्ध। जिसमें जंगल कभी हमलावर नहीं होता। कहीं-कहीं तो जब पीछे हटने की भी जगह नहीं बचती है तो जंगल गायब हो जाता है। जैसे मेले में खेल दिखाता जादूगर पलक झपकते चीजों को गायब कर देता है, वैसे ही फारेस्ट के अधिकारी और ठेकेदार मिलकर जंगल को गायब कर देते हैं। किसी को पता भी नहीं चलता है कि जंगल गायब हो गया है।

वनों में तैनात वनरक्षी व्यस्त हैं कटाई के लिए पट्टा हासिल किये ठेकेदारों को मदद करने में ताकि वे पेड़ों की सुरक्षित कटाई कर सकें। ठेकेदार बीस एकड़ का पट्टा लेकर आते हैं पर जंगल दो सौ एकड़ से गायब हो जाता है। वनरक्षी बीच-बीच में चूल्हे के लिए लकड़ियाँ बीनती औरतों को पकड़ कर अपनी ड्यूटी पूरी करते हैं एवं बड़े साहब फाइलों में इसकी एक बड़ी रिपोर्ट बनाकर पेश करते हैं कि कैसे वन संरक्षण का वृहत कार्य किया जा रहा है।

जंगलों में आबाद बस्तियां अनावृत्त हो रही हैं, मानो किसी घर से छत हटा दी गयी हो और वह आसमान को मुँह बाएं ताकता हुआ खड़ा हो। जंगल की प्रवृति होती है कि वह शीघ्र ही अपने आस-पास के इलाके को भी जंगल बना लेता है। लेकिन यहाँ मनुष्य के आगे जंगल समर्पण करता हुआ प्रतीत होता है।

जंगल से बाहर निकल आई ये बस्तियाँ बाह्य रूप से तो किसी अन्य गाँव की ही भाँति दिखती हैं पर भीतर से इनकी पीड़ा परिलक्षित होती है, ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे किसी आदमी को निर्वस्त्र करके उसे सरेबाजार खड़ा कर दिया गया है एवं वह लाज से गड़ा जा रहा है, वह सर उठाकर खड़े होने की स्थिति में नहीं है। वनोपजों पर आश्रित समाज वनों से दूर होकर शिकारी के द्वारा पीछा किये जा रहे हिरण की भाँति भयभीत और परेशान हैं। गाँव में भयानक बेरोजगारी है। जीविका के लिए मुख्यतः जंगल पर निर्भर रहने वाली जातियां किसी तरह खेती या इधर-उधर छुट्टा मजूरी करके काम चलाती हैं। बच्चे गाँव में आवारा फिरते हैं। लोग दो वक्त की रोटी का इंतजाम करने के संघर्ष में कब बूढ़े होकर मर जाते हैं उन्हें पता ही नहीं चलता है। इनकी व्यथा वैसी है जैसे छांव में रहने वाले पौधे को कड़ी धूप में रख कर पानी से वंचित कर दिया गया हो।

गाँव के पार एक पहाड़ है एवं उसके पहले है एक बरसाती नदी। पहाड़ पर जंगल अभी भी शेष था। पहाड़ पर जंगल के बचे रहने के भी अपने कारण है। पहाड़ तक अभी सड़क नहीं बनी है, इसलिए वहाँ से कटे पेड़ों को लाना बहुत मुश्किल काम है। जहाँ सड़क नहीं बनी वहाँ जंगल बचे हैं। उसी पहाड़ के जंगल में महुआ के अनेक पेड़ हैं एवं गांव की लड़कियां वहां महुआ चुनने जाती हैं। महुआ परिवार के लिए नगद फसल की तरह है, जिसे बेचकर नगद पैसे हाथ में आते थे।

“ वनोपजों पर आश्रित समाज वनों से दूर होकर शिकारी के द्वारा पीछा किये जा रहे हिरण की भांति भयभीत और परेशान हैं। गाँव में भयानक बेरोजगारी है। जीविका के लिए मुख्यत: जंगल पर निर्भर रहने वाली जातियां किसी तरह खेती या इधर–उधर छुट्टा मजूरी करके काम चलाती हैं। बच्चे गाँव में आवारा फिरते हैं। लोग दो वक्त की रोटी का इंतजाम करने के संघर्ष में कब बूढ़े होकर मर जाते हैं उन्हें पता ही नहीं चलता है। इनकी व्यथा वैसी है जैसे छांव में रहने वाले पौधे को कड़ी धूप में रख कर पानी से वंचित कर दिया गया हो।